त्रैमासिक अंक : 15 वर्ष 2017 : आईएसएसएन : 2348-8662
जुलाई-सितम्बर

वाद संवाद

साहित्य, समाज और संस्कृति की पत्रिका

प्रधान संपादक
डॉ. राम रतन प्रसाद

14. वैश्वीकरण के आईने में बुद्ध, गाँधी और अम्बेडकर
– विजय कुमार 'संदेश' 78

15. धर्म समाज की प्रेरक शक्ति
– डॉ. प्रिया शर्मा 86

16. भारतीय समाज में मीडिया
– विजेन्द्र प्रसाद मीना 89

17. स्वयं प्रकाश की कहानियों में मूल्य पर हावी व्यावसायिकता
– सुभाष बुड़िया 93

18. डॉ. जगदीश गुप्त के 'युग्म' काव्य में पौराणिक अभिव्यक्ति
– डॉ. शेख अब्दुल वहाब 97

19. नागार्जुन के उपन्यासों में विधवा समस्या
– डॉ. संगीता वर्मा 100

20. अम्बेडकर के विचार एवं दर्शन पर महात्मा फूले का प्रभाव
– डॉ. जयप्रकाश रविदास 110

21. पर्यटन और सामाजिक सरोकार
– डॉ. अंजली कायस्था 115

22. श्रवण कुमार गोस्वामी के उपन्यासों में दलितों का संघर्ष
– डॉ. राजू राम 120

23. योग-दर्शन में चित्त की विभिन्न भूमियाँ और वृत्तियाँ
– अनुभव द्विवेदी 125

24. भारतीय भाषा के प्रति रघुवीर सहाय की चिन्ता
– दिनेश कुमार यादव 131

कहानी-खण्ड 135-141

मोहर 135
– टेकचन्द

कविता खण्ड 142

– नागार्जुन 142

NSL/ ISSN/ INF/ 2014/ 864 /Refered by NSL/ISSN/CERT/2016/133

धर्म समाज की प्रेरक शक्ति

डॉ. प्रिया शर्मा

धर्म शब्द 'धृ' धातु में 'मन्' प्रत्यय लगाने से बना है, जो धारण करता है', वह धर्म है।[1] वेदांत दर्शन में 'प्रेरणा को धर्म का लक्षण'[2] माना गया है।

'यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धि स धर्मः'[3] के अनुसार तत्त्वज्ञान के द्वारा श्रेष्ठ मुक्ति प्राप्त करना ही धर्म है। भारतीय धर्मशास्त्रों में धर्म के साथ आचरण के महत्त्व को भी स्वीकार किया गया है। आचरण ही धर्म का व्यावहारिक रूप है। धर्मशास्त्रों में वेदों को धर्म का मूल और वेदविहित कर्म (आचरण) को धर्म माना गया है– **'वेदोऽखिलो धर्ममूल'**[4] आचारण को परमधर्म[5] स्वीकार किया गया है।

वास्तव में धर्म की कसौटी मनुष्य ही है। सृष्टि के अन्य पदार्थों एवं जीवों के धर्म सहजात हैं, परंतु मनुष्य का धर्म प्रयत्न द्वारा उपलब्ध किया गया है। धर्म का विकास इसी लोक के बीच हमारे परस्पर व्यवहार के भीतर होता है। समान्यतया धर्म वैयक्तिक एवं सामाजिक आचरणों का नियामक है। यह मानव जीवन की आचारसंहिता है जो हमें कर्त्तव्य-पालन की शिक्षा देता है या व्यष्टि जीवन को समष्टि में विलीन करने का उपदेश देता है। धर्म का संबंध किसी संप्रदाय विशेष से न होकर मानवमात्र से है। इसी का आश्रय लेकर मनुष्य अपने लौकिक एवं पारलौकिक कर्त्तव्यों को निभाता है। लौकिक व्यवहार द्वारा वह समाज एवं राष्ट्र को विकासोन्मुख करता है। किसी भी राष्ट्र का वास्तविक रूप उसके धर्म द्वारा स्पष्ट होता है। धर्मविहीन राष्ट्र या समाज अमर्यादित और विशृंखलित हो जाता है। आदिकाल से लेकर अब तक मनुष्य ने अपनी इस विकसित स्थिति तक पहुँचने के लिए एवं अपनी मनुष्यता के अस्तित्त्व को सुरक्षित रखने के लिए जिन तत्त्वों, धारणाओं, सिद्धांतों और व्यपारों का आश्रय लिया, वे सभी धर्म के अंतर्गत आते हैं।

धर्म के व्यापक रूप के अंतर्गत हिंदू धर्म विश्व के प्राचीनतम धर्मों में परिगण्य है। भारत में समय-समय पर अनेक धार्मिक संप्रदाय प्रादुर्भूत हुए, परंतु वे क्रमशः हिंदू धर्म में घुलमिल गए। हिंदू धर्म सनातन धर्म का पर्याय है, क्योंकि यह वैदिक धर्म के सिद्धांतों पर आधृत है। भारत के सभी धर्म एवं सांस्कृतिक विचारधाराएँ इसमें समाहित होती रहीं–"भारतीय संस्कृति अनेक संस्कृतियों का समन्वित रूप है। भारतीय संस्कृति का एकमात्र अभिव्यंजक हिंदू धर्म भी उसी की तरह एक समन्वयात्मक धर्म है।"[6] हिंदू धर्म को भारतीय धर्म भी कह सकते हैं। इसमें विश्वास, संवेदना, धर्म आचरण, पुनर्जन्म, भक्ति आदि से संबंधित अनेक परंपराएँ प्रचलित हैं। वैदिक युग में हिंदू परंपराएँ उभर कर सामने आई थीं।[7]

• सहायक प्राफ़ेसर, हिन्दी विभाग, दयाल सिंह महाविद्यालय सांध्य, विश्वविद्यालय दिल्ली